# आदिकाव्य वाल्मीकि रामायण (बालकाण्ड) में लोक कल्याण की अवधारणा

डॉ0 सुमन लता देवी*

मानव जीवन विविधताओं से भरा है। अनेक उतार–चढ़ाव के साथ उसका जीवन जगत की यथार्थता और क्रियाशीलता का समन्वित प्रवाह है। वह कर्मनिष्ठता एवं सात्विकता के माध्यम से ही अपनी जीवन–यात्रा पूर्ण करना चाहता है, परन्तु अज्ञानता वश अपने मार्ग से विचलित हो जाता है।

वाल्मीकि रामायण एक उद्‌बोधक ग्रन्थ है। इसमें वर्णित राजा सगर, दशरथ, रामादि इक्ष्वाकुवंशी राजाओं तथा ऋषियों, महर्षियों का जीवन गाथा सदैव प्रेरणास्रोत रहा है। महाप्रतापी राजा सगर का अतुलनीय पराक्रम विश्वविख्यात है इन्होंने समुद्र खुदवाया।[1] महाराजा दशरथ पवित्र सरयू नदी के किनारे अयोध्या नामक नगरी में रहकर प्रजा का पालन करते थे। सम्पूर्ण प्रजा इनसे अपार प्रेम करती थी। प्रजा हित के लिए जितेन्द्रिय, धर्म परायण राजा सदैव यज्ञादि करवाते थे। धन सम्पत्ति में इन्द्र और कुबेर के समान थे। दान दक्षिणादि गुणों से युक्त राजा तीनों लोकों में यश प्राप्त किये।[2] राजा के साथ प्रजा भी धर्मात्मा, बहुश्रुत, निर्लोभी, सत्यवादी अपने–अपने धन से सन्तुष्ट रहने वाली थी।[3] मंत्रीगण भी प्रजा का हित चाहने वाले गुणवान, धर्मज्ञ थे। भूमण्डल पर शत्रु रहित राजा के चरणों में समस्त सामन्त मस्तक झुकाते थे। जैसे देवराज इन्द्र स्वर्ग में रहकर तीनों लोकों का पालन करते हैं, उसी प्रकार राजा दशरथ अयोध्या में रहकर सम्पूर्ण जगत पर शासन करते थे।[4] इन्हीं के समकालीन महाप्रतापी असुर रावण था जो अपनी तपस्या से ब्रह्मा जी को वश में करके में गन्धर्व, यक्ष, देवता तथा राक्षसों के हाथों न मारा जाऊ, ऐसा वरदान प्राप्त करके उद्‌दण्ड तीनों लोकों को कष्ट देने लगा, वह देवराज इन्द्र को कष्ट देने की अभिलाषा रखता था। देव–दानव–गन्धर्व ऋषि–मुनि सभी उससे भयभीत रहते थे। स्त्रियों का अपहरण कर लेने वाले[5] उसके समक्ष सूर्य, वायु, समुद्र की स्वाभाविक प्रवृत्ति भय से धीमी पड़ गयी थी।[6] उस रावण से तीनों लोकों को भयमुक्त करने के लिए भगवान विष्णु मनुज (श्रीराम) के रूप में महाराज दशरथ के यहाँ अवतार लिए। इसी प्रकार सन्त महात्मा भी अपनी घोर तपस्या के द्वारा लोक कल्याण में लगे रहते थे। कुशीक वंशी गाधिपुत्र विश्वामित्र असुरों के वध के लिए ही राम लक्ष्मण को लेने के लिए अवध नरेश महाराज दशरथ के यहाँ पधारे।[7] राजा का अर्घ्य स्वीकार करने के बाद धर्मात्मा विश्वामित्र ने उनसे क्रमशः नगर, खजाना, राज्य, बन्धु–बान्धव, मित्रवर्ग, यज्ञ–योग, देव कर्म, अतिथि सत्कार, मनुष्यादि सबका कुशल मंगल पूछा।[8] लोक में अतिथि सत्कार का विशेष महत्व है। महाराज दशरथ का मुख महर्षि विश्वामित्र को देखकर खिल उठा वे कहने लगे हे! महर्षि आपका शुभागमन मेरे यहाँ उसी प्रकार हुआ है जैसे किसी मरणधर्मा मनुष्य को अमृत की प्राप्ति हो जाय, निर्जल प्रदेश में पानी वरस जाए, किसी सन्तानहीन को अपने अनुरूप पत्नी के गर्भ से पुत्र प्राप्त हो जाए, उसी प्रकार मैं आपके आगमन से प्रसन्न हूँ।[9] लोकहित के लिए ही स्त्री अवध्य होने पर भी पूर्व काल में विरोचन की पुत्री मन्थरा जो सारी पृथ्वी का नाश करना चाहती थी, उसके इस विचार को जानकर इन्द्र ने उसका वध किया।[10] श्रीराम ने गौओं, चारों, वर्णों, तीनों लोकों के हित के लिए [11] स्त्रीहत्या, दयादि का विचार त्यागकर भयंकर दुराचारिणी ताड़का का वध किया।[12] ताड़का वध के बाद श्रीराम और लक्ष्मण विश्वामित्र का छः दिन और छः रात तक चलने वाले यज्ञ और उनकी रक्षा महापराक्रमी मारीच और सुबाहू से करते रहे।[13] इन दोनों बाहुबली राक्षसों के साथ दुराचारी, मांस भक्षण करने वाले अनेकों राक्षसों का भी राम और लक्ष्मण ने वध किया।[14] आसुरी प्रवृत्ति को अपनाने वाले चाहे राजा का भी पुत्र हो तो उसे भी उचित सजा मिलती थी। राजा सगर का ज्येष्ठ पुत्र असमंज पापाचर में प्रवृत्त होकर नगर के बालकों को पकड़कर सरयू नदी में फेंक देता था, और जब वे डूबने लगते तब उनकी ओर देखकर हँसता था, वह सदैव सत्पुरूषों को पीड़ा देने और नगर निवासियों का अहित करने में लगा था, यह देखकर राजा सगर ने उसे नगर से बाहर निकाल दिया।[15] मनुष्य अपने जीवन में सामाजिक और धार्मिक मर्यादा का सर्वथा ध्यान रखता था। प्राण वायु के रूप में समस्त प्राणियों के भीतर विचरण करने वाले वायुदेव जब राजर्षि कुशनाभ की सौ

* एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, संस्कृत, डॉ0 राम मनोहर लोहिया पी.जी. कॉलेज, भैरवतालाब, राजातालाब, वाराणसी

कन्याओं के साथ अशुभ मार्ग का अवलम्बन करके बलात्कार करना चाहते थे तब वे कन्यायें धर्म का वास्ता देकर उन्हें सावधान किया। और कहा कि हम सब स्वच्छन्द नहीं है आप पिताजी के पास जाकर हमारा वरण कीजिए।[16] राजा कुशनाभ अपनी पुत्रियों से बोले कि तुम लोगों ने महान कार्य कियाहै, मेरे कुल की मर्यादा बचायी है। क्षमाशील होकर ऐसा कार्य किया है जो देवताओं के लिए भी दुष्कर है। पुत्रियों! स्त्री हो या पुरूष सभी के लिए क्षमा ही आभूषण है। क्षमा ही दान, सत्य, यज्ञ, यश, धर्म सब कुछ है। क्षमा पर ही सम्पूर्ण जगत टिका हुआ है।[17] धार्मिक मर्यादा का उल्लंघन होने पर परिणाम बुरा होता है। कपटपूर्वक महिर्ष गौतम का वेश धारण करके आये इन्द्र को पहचान कर भी दुर्बुद्धि नारी अहिल्या ने कौतुहलवश उनके साथ समागम किया और तपोवल सम्पन्न अपने पति से शाप युक्त होकर कई हजार वर्षों तक केवल हवा पीकर उपवास करके कष्ट उठाती हुई सभी प्राणियों से अदृश्य होकर उसी आश्रम में पड़ी रही। भगवान श्रीराम के पदार्पण से वह पवित्र होकर उनका आतिथ्य सत्कार करके लोभ मोह आदि दोष से रहित होकर प्रसन्नता पूर्वक पति के पास पहुँचकर अपना पूर्व शरीर धारण कर ली।[18] कुशीकनन्दन विश्वामित्र ब्रह्मर्षि का अनुपम पद प्राप्त करने के लिए जब घोर तपस्या प्रारम्भ किये, तब देवताओं और इन्द्र को भारी सन्ताप हुआ और उन्होंने रम्भा नामक अप्सरा से विश्वामित्र का अहित करने के उद्देश्य से कहा कि तुम्हें ऋषि को किसी तरह बुलाकर काम और मोह के वशीभूत करके तपस्या से विचलित कर देना है। देवराज इन्द्र का यह सारा कुचक्र मुनिवर विश्वामित्र के समझ में आ गया और उन्होंने रम्भा को शाप दिया कि इस अपराध के कारण तु दस हजार वर्षों तक पत्थर की प्रतिमा बनकर खड़ी रहेगी। ब्रह्मा जी के पुत्र वशिष्ट तेरा उद्धार करेंगे।[19] मुनि के शाप से रम्भा पत्थर बन गयी। परन्तु महामुनि विश्वामित्र अपना क्रोध न रोक सकने के कारण मन ही मन सन्तप्त हो उठे। क्रोध से तपस्या का क्षय हो गया तथा मुनि का चित भी अशान्त हो गया।[20]

अन्ततः प्रतीत होता है कि वाल्मीकि रामायण का बालकाण्ड ऐसे प्रसंगों से भरा पड़ा है जो मनुष्य को अपने जीवन में लोक कल्याण की भावना को श्रेष्ठ मानकर अपने अन्दर की पाश्विकता को समाप्त करके सद्गुणों को जागृत करके अपार विपत्तियों से घिरे रहने पर भी त्यागपूर्ण और संयम का जीवन व्यतीत करते हुए पुरूषोत्तम श्रीराम के चरित्र का श्रवण करके इस लोक तथा परलोक में उत्तम कामनाओं को प्राप्त करने की प्रेरणा प्रदान करता है।[21]

---

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**


1 येषां स सगरो नाम सागरो येन खानितः।
षष्टिपुत्रसहस्राणि यं यान्तं पर्यवारयन्।। बालकाण्ड सर्ग, 5/2

2 तस्या पुर्यामयोध्यायां वेदवित् सर्वसंग्रहः।
दीर्घदर्शी महातेजाः पौरजानपदप्रियः।।
इक्ष्वाकूणामतिरथो यज्वा धर्मपरो वशी।
महर्षिकल्पो राजर्षिस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।।
बलवान् निहतामित्रो मित्रवान् विजितेन्द्रियः।
धनैश्च संचयैश्चान्यैः शक्रवैश्रवणोपम्।। सर्ग 6/1,2,3

3 तस्मिन् पुरवरे हृष्टा धर्मात्मानो बहुश्रुताः।
नरास्तुष्टा धनैः स्वैः स्वैरलुब्धाः सत्यवादिनः।। सर्ग 6/6

4 ईदृशैस्तैरमात्यैश्च राजा दशरथोऽनघः।
उपपन्नो गुणोपेतैरन्वशासद् वसुन्धराम्।।
अवेक्ष्यमाणश्चारेण प्रजा धर्मेण रक्षयन्।
प्रजानां पालनं कुर्वन्नधर्मे परिवर्जयन्।।
विश्रुतिस्त्रिषु लोकेषु वदान्यः सत्यसंगरः।
स तत्र पुरूषव्याघ्रः शशास पृथिवीमिमाम्।।
नाध्यगच्छद्विशिष्टं वा तुल्यं वा शत्रुमात्मनः।

मित्रवन्नतसामन्तः प्रतापहतकष्टकः।
स शशास जगद् रजा दिवि देवपतिर्यथा।। सर्ग 7/20–23

5 उत्सादयति लोकांस्त्रीन् स्त्रियश्चाप्युपकर्षति।
तस्मात् तस्य वधो दृष्टो मानुषेभ्यः परंतप।। सर्ग 16/7

6 उद्वेजयति लोकांस्त्रीनुच्छ्रितान् द्वेष्टि दुर्मतिः।
शकं विदशराजानं प्रधर्षयितुमिच्छति।।
ऋषीन् यक्षान् सगन्धर्वान् ब्राह्मणानसुरांस्तदा।
अतिक्रामति दुर्धर्षो वरदानेने मोहितः।।
नैनं सुर्यः प्रतपति पार्श्वे वाति न मारूतः।
चलोर्मिमाली तं दृष्ट्वा समुद्रोऽपि न कम्पते।। सर्ग 15/8,9,10

7 स राज्ञो दर्शनाकांक्षी द्वाराध्यक्षानुवाच ह।
शीघ्रमाख्यात मां प्राप्तं कौशिकं गाधिनः सुतम्।। सर्ग 18/49

8 पुरे कोशे जनपदे बान्धवेषु सुहृत्सु च।
कुशलं कौशिको राज्ञः पर्यपृच्छत् सुधार्मिकः।।
अपि ते संनताः सर्वे सामन्तरिपवो जिताः।
दैवं च मानुषं यैव कर्म ते साध्वनुष्ठितम्।। सर्ग 18/45, 46

9 यथामृतस्य सम्प्राप्तिर्यथा वर्षमनूदके।
यथा सदृशादारेषु पुत्रजन्माप्रजस्य वै।
प्रणष्टस्य यथा लाभो यथा हर्षो महोदयः।
तथैवगमनं मन्ये स्वागतं ते महामुने।
कं च ते परमं कामं करोमि किमु हर्षितः।।
पात्रभूतोऽसिमे ब्रह्मन् दिष्ट्या प्राप्तोऽसि मानद।
अद्य मे सफलं जन्म जीवितं च सुजीवितम्।। सर्ग 18/50, 51, 52, 53

10 श्रूयते हि पुरा शक्रो विरोचनसुतां नृप।
पृथिवीं हन्तुमिच्छन्तीं मन्थरामभ्यसूदयत्।। सर्ग 25/20

11 एनां राघव दुर्वृत्तां यक्षीं परमदारुणाम्।
गोब्राह्मणहितार्थाय जहि दुष्टपराक्रमाम्।। सर्ग 25/15

12 नहि ते स्त्रीवधकृते घृणा कार्या नरोत्तम।
चातुर्वर्ण्यहितार्थे हिं कर्तव्यं राजसूनुना।। सर्ग 25/17

13 उपासांचक्रतुर्वीरौ यत्तौ परमधन्विनौ।
ररक्षतुर्मुनिवरं विश्वामित्रमरिंदमौ।। सर्ग 30/6

14 पश्य लक्ष्मणं दुर्वृत्तान् राक्षसान् पिशिताशनान्।
राघवः परमोदारो मुनीनां मुदमावहन्।। सर्ग 30/15–23

15 बालान् गृहीत्वा तु जले सरय्वा रघुनन्दन।
प्रक्षिप्य प्राहसन्नित्यं मज्जतस्तान् निरीक्ष्य वै।।
एवं पापसमाचारः सज्जनप्रतिबाधकः।
पौराणामहिते युक्तः पित्रा निर्वासितः पुरात्।। सर्ग 38/20,21

16 पितृमत्यः स्म भद्रं ते स्वच्छन्दे न वयं स्थिताः।
पितरं नो वृणीष्व त्वं यदि नो दास्यते तव।। सर्ग 33/3

17 क्षान्तं क्षमावतां पुत्र्यः कर्तव्यं सुमहत् कृतम्।
ऐकमत्यमुपागम्य कुलं चावेक्षितं मम।।
अलंकारो हित नारीणां क्षमा तु पुरूषस्य वा।

दुष्करं तच्च वै क्षान्तं त्रिदशेषु विशेषतः।।
यादृशी वः क्षमा पुत्र्यः सर्वासामविशेषतः।
क्षमा दानं क्षमा सत्यं क्षमा यज्ञाश्च पुत्रिकाः।
क्षमा यशः क्षमा धर्मः क्षमायां विष्ठतं जगत्।। सर्ग 33/6–8

[18] तथा शप्त्वा च वै शक्रं भार्यापि च शप्तवान्।
इह वर्षसहस्त्राणि बहूनि निवसिष्यसि।।
वातभक्षा निराहारा तप्यन्ती भस्मशायिनी।
अदृश्या सर्वभूतानामाश्रमेऽमिन् वसिष्यसि।।
यदा त्वेतद् वनं घोरं रामो दशरथात्मजः।
आगमिष्यति दुर्धर्षस्तदा पूता भविष्यसि।।
मत्सकाशं मुदा युक्ता सवं वपुर्धारयिष्यसि।। सर्ग 48/29–32

[19] यन्मां लोभयसे रम्भे कामक्रोधजयैषिणम्।
दशवर्षसहस्त्राणि शैली स्थास्यसि दुर्भगे।।
ब्राह्मणः सुमहातेजास्तपोबलसमन्वितः।
उद्धरिष्यति रम्भे त्वां मत्क्रोधकलुषीकृताम्।। सर्ग 64/12–13

[20] बभूवास्य मनश्चिन्ता तपोऽपहरणे कृते।
नैवं क्रोधं गमिष्यामि न च वक्ष्ये कथंचन।। सर्ग 64/17

[21] इत्येवं श्रृणुयाद् यस्तु श्रीरामचरितं शुभम्।
सर्वान् कामानवाप्नोति परत्रामुत्र चोत्तमान्।। रामायाणमाहात्म्य, प्र. अ. – 32

●